मूल्य ५०.०० रूपये

तित्थयर

श्रुत देवता

वर्ष : ३५ अंक : ०१ अप्रैल २०११

॥ जैन भवन ॥

Courtesy :

मनुष्य कर्म से ब्राह्मण, कर्म से क्षत्रिय,
कर्म से ही वैश्य और कर्म से ही शूद्र होता है।

कमल सिंह करनावट
अध्यक्ष

विनोद चंद बोथरा
कोषाध्यक्ष

गौतम दूगड़
सचिव

जैन भवन

पी-२५, कलाकार स्ट्रीट
कोलकाता - ७०० ००७
फोन नं. : २२६८-२६५५, २२७२-९०२८
E-mail : jainbhawan@bsnl.in

तित्थयर

श्रमण संस्कृति मूलक मासिक पत्रिका

वर्ष - ३५ अंक - १ अप्रैल २०११

लेख, पुस्तक समीक्षा तथा पत्रिका से सम्बन्धित पत्र व्यवहार के लिय पता - **Editor : Titthayar, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007**

Phone : 2268-2655, 2272-9028,

Email : jainbhawan@bsnl.in

विज्ञापन तथा सदस्यता के लिये कृपया सम्पर्क करें --

Secretary, Jain Bhawan, P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007

Life Membership : India : Rs. 5000.00. Yearly : 500.00

Foreign : $ 500

Published by Dr. Lata Bothra on behalf of Jain Bhawan from P-25, Kalakar Street, Kolkata - 700 007, Phone : 2268-2655 and Printed by her at Arunima Printing Works, 81, Simla Street Kolkata - 700 007 Phone : 2241-1006

संपादन

डॉ. लता बोथरा,

॥ जैन भवन ॥

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	लेख	लेखक	पृ. सं.
१.	गौतम – गणधर या बुद्ध	डॉ. लता बोथरा	५

Composed by:

Jain Bhawan Computer Centre, P-25, Kalakar Street Kolkata - 700 007

गौतम – गणधर या बुद्ध

अंगूठे अमृत बसे, लब्धि तणा भण्डार।
श्री गुरु गौतम समरिये, वांछित फल दातार।।

जैन और जैनेत्तर दोनों साहित्य में आदि तीर्थंकर ऋषभदेव को आदिधर्म का प्रणेता माना है। भागवत में लिखा है—

"हे परीक्षित! उस यज्ञ में महर्षियों द्वारा इस प्रकार प्रसन्न किये जाने पर भगवान महाराजा नाभि का प्रिय करने के लिये उनके अन्तःपुर में महारानी मरुदेवी के गर्भ से वातरशना (योगियों) श्रमणों और उर्ध्वगामी मुनियों का धर्म प्रकट करने के लिये शुद्ध सत्वमय शरीर से प्रकट हुए।"

"भगवान ऋषभदेव यद्यपि परम स्वतंत्र होने के कारण स्वयं सर्वदा ही सब प्रकार की अनर्थ परम्परा से रहित केवल आनन्दानुरूप स्वरूप और साक्षात् ईश्वर ही थे तो भी विपरीतवत् प्रतीत होने वाले कर्म करते हुए उन्होंने काल के अनुसार धर्म का आचरण करके उसका सत्व न जानने वालों को उसी की शिक्षा दी। साथ ही सम (मैत्री) शांत (माध्यस्थ) सह्रद (प्रमोद) और कारुणिक (कृपापरत्व) रहकर धर्म, अर्थ, यश, सन्तानरूप भोग सुख तथा मोक्ष सुख का अनुभव करते हुए गृहस्थाश्रम में लोगों को नियमित किया।"

इसी आदि धर्म से ही अनेक धर्मों मतों का प्रादुर्भाव हुआ। भिन्न-भिन्न विचार भिन्न-भिन्न धर्मों के रूप में विकसित हुए। जिस महापुरुष की मान्यता जिन लोगों ने स्वीकार की वे उन्हीं के अनुगामी बने और उनके बनाये सिद्धान्तों को धारण किया। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के बाद उनकी परम्परा में २३ तीर्थंकर और हुए जिनमें अंतिम तीर्थंकर

वर्द्धमान महावीर थे जो आज से लगभग २६सौ वर्ष पूर्व हुए। श्रमणसंघ की ढीली पड़ रही व्यवस्थाओं को भगवान महावीर ने पुनः अनुशासित किया था और भगवान ऋषभदेव से चले आ रहे सनातन शाश्वत सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर समाज का पुनरुद्धार किया था। यही कारण है कि विभिन्न परम्पराओं के लोग उनके सम्मुखीन हुए। महावीर के उपदेशों को उनके गणधरों ने श्रुत में पिरोया और उन्हें आगम अर्थात्– पूर्व से चला आने वाला ज्ञान कहा गया। गणधरों द्वारा श्रुत में पिरोया जाने के कारण इन्हें गणिपिटक भी कहा गया। भगवान महावीर के ग्यारह गणधर थे। जैन आगम साहित्य से पता चलता है कि प्रत्येक तीर्थंकर के गणधर होते थे। गणधर का अर्थ है गणों के अध्यक्ष या स्वामी। ये गणधर परम्परा हमें भगवान ऋषभदेव से भगवान महावीर तक प्राप्त होती हैं। आवश्यकवृत्ति में अनुत्तर ज्ञान, दर्शन आदि गुणों के गण समूह को धारण करने वाले गणधर कहे गये है। आगम वाङ्मय में तीर्थंकर के प्रमुख शिष्य जो उनके द्वारा प्रव्रज्जित तत्व ज्ञान का द्वादशांगी के रूप में संग्रथन करते हैं। उनके धर्म संघ के विभिन्न गणों की देख-रेख करते हैं, अपने-अपने गण के श्रमणों को आगम वाचना देते हैं, वहीं गणधर कहलाते हैं।

बौद्ध साहित्यानुसार श्रमण संस्कृति की परम्परा में भगवान महावीर के समय ही एक और महापुरुष हुए जो गौतम बुद्ध के नाम से आज प्रसिद्ध है। इनके उपदेशों को भी पिटक कहा गया। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में जिस महापुरुष को भी ज्ञान प्राप्त होता था उसको अर्हत या बुद्ध कहा जाता था। भारत के बाहर विदेशों में विशेषकर चीन में हमें यहीं परम्परा देखने को मिलती है। वहाँ पर तीर्थंकर केवलज्ञानी, तत्वज्ञानी, आचार्य या साधारण ज्ञानी सभी को बुद्ध कहने का प्रचलन है। **little Buddha, Big Buddha, Master Buddha, Disciple Buddha,** आदि। बीजिंग के मंदिर में अन्य बुद्धाओं के साथ ऋषभबुद्ध, और अजीतबुद्ध की मूर्तियां भी है। चीनी

परिव्राजक फाह्यान, इत्सिंग तथा ह्वेनसांग किस बुद्ध की खोज में भारत आये? वे स्वयं ही भ्रमित थे। फाह्यान जो ४०० ई० पू० भारत में आया उसने लिखा है कि तब से १४९७ वर्ष पहले बुद्ध का निर्वाण हुआ था अर्थात् १०९७ ई. पू.। ह्वेनसांग ने भी लिखा है कि कुछ लोग कहते हैं कि बुद्ध के निर्वाण को १२०० वर्ष हो गये, कुछ के अनुसार १५०० वर्ष हुए और कुछ ९०० वर्ष बताते हैं। इन सब वर्णनों से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रारम्भिक स्तर पर जो एक जैसा था वह सैकड़ों वर्षों बाद कालान्तर में अलग-अलग रूप में प्रतीत होने लगा। जैसे आज महावीर के अनुयायी अनेक सम्प्रदायों में बटे है। अलग-अलग आचार्यों की परम्परा में जो श्रावक है उनके लिये अपने आचार्य के उपदेश ही सर्वोपरि होते हैं। पास से देखे तो यह अन्तर समझ आ जाता है। लेकिन दूर से यह समय के अन्तराल में देखे तो यहीं लगेगा की ये सब अलग-अलग परम्परा के है। कुछ ऐसा ही भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतमस्वामी और गौतम बुद्ध के संदर्भ में हुआ। वास्तव में ये दोनों एक ही थे लेकिन कालान्तर में तथा सुदूरवर्ती क्षेत्रों में यह एक व्यक्तित्व अलग-अलग दो व्यक्तित्व के रूप में दिखाई पड़ने लगा। ऐसा कैसे, क्यों और कब हुआ यहीं मेरे इस शोध निबन्ध का विषय है।

आवश्यकनिर्युक्त में भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतम स्वामी का जीवन वृत्तान्त मिलता है। जिसमें वर्णन है कि उन्होंने पाँच वर्ष तक विभिन्न प्रदेशों में घूम-घूमकर वहाँ के विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। उनके शब्दों में— **'मैंने तीनों जगत् के हजारों विद्वानों को वाद में पराजित किया है।'**

जैन साहित्य के अनुसार गौतम गौत्रीय इन्द्रभूति का शरीर ऊँचाई में सात हाथ आकार समचतुरस्य लक्षणयुक्त बल बज्र ऋषभनाराच वज्र सा मजबूत, वर्ण, तपाये हुए कुण्डल अथवा पद्म कमल सा गौर्य। गौतम की भव्य और सुन्दर आकृति को देखकर मनुष्य तो क्या देव भी मोहित हो जाते है। उनके विशाल भाल और कमल पुष्प सम खिले नैनों

की रमणिकता देख दर्शकजन निहारते ही रह जाते हैं। गौतम बुद्ध भी प्रव्रज्जित होने के बाद राजगृह में जब प्रविष्ट हुए और वहां भिक्षा के लिए निकले तो उनके देव तुल्य सौन्दर्य को देखकर सारा नगर चकित रह गया। राजपुरुषों ने राजा से जाकर कहा— देवरूप का एक पुरुष मधुकरी मांग रहा है। इस प्रकार दोनों परम्पराओं में दोनों के देवतुल्य सौन्दर्य का वर्णन हमें मिलता है जो उनके एक ही होने की पुष्टि करता है।

महावीर से पूर्व जो श्रमण-संस्कृति थी वह २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ परम्परा की थी। उस समय के अधिकांश राजा-प्रजा भगवान महावीर के परिवारजन तथा गौतमबुद्ध के परिवारजन भी इसी परम्परा के अनुगामी थे। भगवान बुद्ध के चरित्र से यह स्पष्ट होता है कि बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व में पार्श्वपरम्परा या महावीर परम्परा से वे प्रभावित रहे। मज्झिम निकाय के महासिंहनाद सुत्त में उन्होंने अपने शिष्य सारिपुत्त से कहा—

> "सारिपुत्त! बोधि-प्राप्ति से पूर्व मैं दाढ़ी, मूंछों का लुंचन करता था। मैं खड़ा रह कर तपस्या करता था। उकड़ू बैठकर तपस्या करता था। मैं नंगा रहता था। लौकिक आचारों का पालन नहीं करता था। हथेली पर भिक्षा लेकर खाता था।... बैठे हुए स्थान पर आकर दिये हुए अन्न की, अपने लिए तैयार किये हुए अन्न को और निमंत्रण को भी स्वीकार नहीं करता था। गर्भिणी व स्तनपान कराने वाली स्त्री से भिक्षा नहीं लेता था।"

यह समस्त आचार जैन साधुओं का है। कुछ स्थविर-कल्पित साधुओं का और कुछ जिन-कल्पित साधुओं का। इससे प्रतीत होता है कि गौतम बुद्ध पार्श्वनाथ-परम्परा के किसी श्रमण संघ में दीक्षित हुए

और वहाँ से उन्होंने बहुत कुछ सद्ज्ञान प्राप्त किया। पंडित सुखलालजी और बौद्ध विद्वान श्रीधर्मानंद कौशम्बी ने भी माना है कि भगवान बुद्ध ने पार्श्वनाथ की परंपरा को स्वीकार किया था। आठवीं शताब्दी की रचना दर्शनसार में देवसेनाचार्य ने गौतम बुद्ध के संदर्भ में लिखा है कि—

सिरिपासणाहतित्थे सरयूतीरे पलासणयरत्थो।
पिहियासवस्स सिस्सो महासुदो बड्ढकित्तिमुणी।।
तिमिपूरणासणेहिं अहिगयपवज्जाओ परिब्भट्ठो।
रत्तंबर धरित्ता पवट्टिय तेण एयंतं।।
मंसस्स णत्थि जीवो जहा फले दहिय-दुद्ध-सक्करए।
तम्हा तं बंछित्ता तं भक्खंतो ण पाविट्ठो।।

जैन श्रमण पिहिताश्रव ने सरयू नदी के तट पर पलाश नामक ग्राम में श्री पार्श्वनाथ के संघ में उन्हें दीक्षा दी और उनका नाम मुनि बुद्धकीर्ति रखा। सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ० राधाकुमुद मुकर्जी कहते हैं– **वास्तविक बात यह ज्ञात होती है कि बुद्ध ने पहले आत्मानुभव के लिए उस काल में प्रचलित दोनों साधनाओं का अभ्यास किया, आलार और उद्रक के निर्देशानुसार ब्राह्मण मार्ग का और तब जैन मार्ग का।**

त्रिपिटक साहित्य में निर्ग्रन्थनाथ पुत्र को चातुर्याम संवरवादी बताया है जो कि पार्श्वनाथ से संबंधित था, महावीर से नहीं। भगवान महावीर के ग्यारह गणधरों में से नौ गणधरों का निर्वाण उनके परिनिर्वाण से पूर्व ही हो गया था। उसके बाद गौतम स्वामी और सुधर्मा स्वामी ही जीवित रहे। नौ गणधरों के संघों का सुधर्मा स्वामी के संघ में विलय होने का वर्णन मिलता है। प्राचीन श्वेताम्बर परम्परा के अनुसार भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् आर्य सुधर्मा को भगवान महावीर के प्रथम पटधर के रूप में निर्युक्त किया गया था। गौतम स्वामी के संघ में उनके शिष्यों के अलावा पार्श्वनाथ स्वामी के साधुओं क शामिल

होने का उल्लेख मिलता है। श्रावस्ती में पार्श्वनाथ सम्प्रदाय के केशी श्रमण और गौतम स्वामी की परस्पर चर्चा इस बात की पुष्टि करती है— श्रावस्ती, गौतम बुद्ध का भी प्रिय स्थान माना जाता था। वहाँ के जेतवन और पूर्वाराम बिहार में उन्होंने पच्चीस वर्षावास बिताए थे। यह उल्लेखनीय है कि श्रावस्ती निर्ग्रन्थों का भी मुख्य केन्द्र थी। पार्श्वनाथ सम्प्रदाय के केशी श्रमण और गौतम स्वामी की चर्चा यहीं पर हुई थी और केशी श्रमण का संघ गौतम स्वामी के संघ में मिल गया था। इसका वर्णन कुछ इस प्रकार है— मिथिला से विहार करते हुए भगवान महावीर हस्तिनापुर की तरफ पहुँचते है। दूसरी तरफ गौतम स्वामी अपने शिष्य समुदाय के साथ श्रावस्ती जाते हैं। वहीं के तिन्दुक उद्यान में मति, श्रुति, अवधि ज्ञान के ज्ञाता पार्श्वनाथ सम्प्रदाय के श्रमण केशीकुमार और मति, श्रुति, अवधि और मन पर्याय आदि चार ज्ञान के धारक गौतम स्वामी की धर्म संबंधी चर्चा होती है और केशी कुमार गौतम स्वामी से अपनी शंकाओं का निवारण करते हैं।

गौतम से अनुमति पाकर केशीकुमार ने चर्चा को आरम्भ करते हुए कहा— **महाभाग! वर्धमान स्वामी ने पाँच शिक्षारूप धर्म का उपदेश किया है, जबकि महामुनि पार्श्वनाथ ने चतुर्याम धर्म का प्रतिपादन किया है। मेधाविन्! एक कार्य में प्रवृत्त होने वाले साधकों के धर्म में विशेष भेद होने का क्या कारण है? धर्म में अन्तर हो जाने पर आपको संशय क्यों नहीं होता?**

गौतम ने उत्तर दिया— **जिस धर्म में जीवादि तत्त्वों का विनिश्चय किया जाता है, उसके तत्त्व को प्रज्ञा ही देख सकती है। काल-स्वभाव से प्रथम तीर्थंकर के मुनि ऋजु जड़ और चरम तीर्थंकर के मुनि वक्र जड़ है; किन्तु मध्यवर्ती तीर्थंकरों के मुनि ऋजु प्राज्ञ है। यहीं कारण है कि धर्म के दो भेद है। प्रथम तीर्थंकर के मुनियों का कल्प दुर्विशोध्य और चरम तीर्थंकर के मुनियों का कल्प दुरनुपालक होता है; पर मध्यवर्ती तीर्थंकरों के मुनियों का कल्प सुविशोध्य और सुपालक होता है।**

केशीकुमार— **गौतम! आपने मेरे एक प्रश्न का समाधान तो कर दिया। दूसरी जिज्ञासा को भी समाहित करें। वर्धमान स्वामी ने अचेलक धर्म का उपदेश दिया है और महामुनि पार्श्वनाथ ने सचेलक धर्म का प्रतिपादन किया है। एक ही कार्य में प्रवृत्त होने वालों में यह अन्तर क्यों? इसमें विशेष हेतु क्या है? यशस्विन्! लिंग-वेष में इस प्रकार अन्तर हो जाने पर क्या आपके मन में विप्रत्यय उत्पन्न नहीं होता?**

गौतम— **लोक में प्रत्यय के लिए, वर्षादि ऋतुओं में संयम की रक्षा के लिए, संयम यात्रा के निर्वाह के लिए, ज्ञानादि ग्रहण के लिए अथवा यह साधु है इस पहचान के लिए लिंग का प्रयोजन है। भगवन्! वस्तुतः दोनों ही तीर्थंकरों की प्रतिज्ञा तो यही है कि निश्चय में मोक्ष के सद्भूत साधन तो ज्ञान, दर्शन और चारित्र ही है।**

केशीकुमार— **महाभाग! आप अनेक सहस्त्र शत्रुओं के बीच खड़े हैं। वे शत्रु आपको जीतने के लिए आपके अभिमुख आ रहे हैं। आपने उन शत्रुओं को किस प्रकार जीता?**

गौतम— **जब मैंने एक शत्रु को जीत लिया, पाँच शत्रु जीते गये। पाँच शत्रुओं के जीते जाने पर दस और इसी प्रकार मैंने सहस्त्रों शत्रुओं को जीत लिया।**

केशीकुमार— **वे शत्रु कौन हैं?**

गौतम— **महामुने! बहिर्भूत आत्मा, चार कषाय व पाँच इन्द्रियाँ शत्रु है। उन्हें जीतकर मैं विचरता हूँ।**

केशीकुमार— **मुने! लोक में बहुत सारे जीव पाश-बद्ध देखे जाते हैं, किन्तु आप पाश-मुक्त और लघुभूत होकर कैसे विचरते हैं।**

गौतम— **मुने! मैं उन पाशों को सब तरह से छेदन कर तथा सोपाय विनिष्ट कर मुक्त-पाश और लघुभूत होकर विचरता हूँ।**

केशीकुमार— **भन्ते! वे पाश कौन से हैं?**

गौतम— **भगवन्! राग-द्वेष और तीव्र स्नेह रूप पाश है, जो बड़े भयंकर है। इनका सोद्योग छेदन कर मैं यथाक्रम विचरता हूँ।**

केशीकुमार— **गौतम! अन्तःकरण की गहराई से उद्भूत लता, जिसका फल-परिणाम अत्यन्त विष-सन्निम है, को आपने किस प्रकार उखाड़ा।**

गौतम— **मैंने उस लता का सर्वतोभावेन छेदन कर दिया है तथा उसे खण्ड-खण्ड कर समूल उखाड़ कर फेंक दिया है; अतः मैं विष-सन्निभ फलों के भक्षण से सर्वधा मुक्त हो गया हूँ।**

केशीकुमार— **महाभाग! वह लता कौन सी है?**

गौतम— **महामुने! संसार में तृष्णा लता बहुत भयंकर है और दारुण फल देने वाली है। उसका न्याय-पूर्वक उच्छेद कर मैं विचरता हूँ।**

केशीकुमार— **मेधाविन्! शरीर में घोर तथा प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित हो रही है। वह शरीर को भस्मसात् करने वाली है। आपने उसे कैसे शान्त किया, कैसे बुझाया।**

गौतम— **तपस्विन्! महामेघ से प्रसूत उत्तम और पवित्र जल को ग्रहणकर मैं उस अग्नि को सींचता रहता हूँ; अतः सिंचित की गई अग्नि मुझे नहीं जलाती।**

केशीकुमार— **महाभाग! वह अग्नि और जल किसको कहा गया है?**

गौतम— **धीमन्! कषाय अग्नि है। श्रुत, शील और तप जल है। श्रुत जलधारा से अभिहत वह अग्नि मुझे नहीं जलाती।**

केशीकुमार— **तपस्विन्! यह साहसिक, भीम, दुष्ट, अश्व चारों ओर भाग रहा है। उस पर चढ़े हुए भी आप उसके द्वारा उन्मार्ग में कैसे नहीं ले जाये गये?**

गौतम— **महामुने! भागते हुए अश्व को मैं श्रुतरूप रस्सी से बाँधे रखता हूँ, अतः वह उन्मार्ग में नहीं जा पाता, सन्मार्ग में ही प्रवृत्त रहता है।**

केशीकुमार— **यशस्विन्! आप अश्व किसको कहते हैं?**

गौतम— **व्रतिवर! मन ही दुःसाहसिक व भीम अश्व है। वहीं चारों ओर भागता है। मैं कन्थक अश्व की तरह धर्म-शिक्षा के द्वारा उसका निग्रह करता हूँ।**

केशीकुमार— **मुनिपुंगव! संसार में ऐसे बहुत से कुमार्ग है, जिन पर चलने से जीव सन्मार्ग से च्युत हो जाता है। किन्तु आप सन्मार्ग में चलते हुए उससे विचलित कैसे नहीं होते हैं?**

गौतम— **व्रतिराज! सन्मार्ग में गमन करने वालों व उन्मार्ग में प्रस्थान करने वालों को मैं अच्छी तरह जानता हूँ; अतः सन्मार्ग से हटता नहीं हूँ।**

केशीकुमार— **विज्ञवर! वह सन्मार्ग और उन्मार्ग कौन सा है?**

गौतम— **मतिमन्! कुप्रवचन को मानने वाले सभी पाखण्डी उन्मार्ग में प्रस्थित हैं। सन्मार्ग तो जिन भाषित है। और यह मार्ग निश्चित ही उत्तम है।**

केशीकुमार— **महर्षे! महान् उदक के वेग में बहते हुए प्राणियों के लिए शरण और प्रतिष्ठारूप द्वीप आप किसे कहते हैं?**

गौतम— **यतिराज! एक महाद्वीप है। वह बहुत विस्तृत है। जल के महान् वेग की वहाँ गति नहीं है।**

केशीकुमार— **महाप्राज्ञ! वह महाद्वीप कौन सा है?**

गौतम— **ऋषिवर! जरा-मरण के वेग से डूबते हुए प्राणियों के लिये धर्मद्वीप प्रतिष्ठारूप है और उसमें जाना उत्तम शरण रूप है।**

केशीकुमार— **महाप्रवाह वाले समुद्र में एक नौका विपरीत रूप से चारों ओर भाग रही है। आप उसमें आरूढ़ हो रहे हैं। मेरी जिज्ञासा है, फिर आप पार कैसे जा सकेंगे।**

गौतम— **सच्छिद्र नौका पारगामी नहीं होती, किन्तु छिद्र-रहित नोका पार पहुँचाने में समर्थ होती है।**

केशीकुमार— **वह नौका कौन सी है?**

गौतम— **शरीर नौका है। आत्मा नाविक है। संसार समुद्र है, जिसे महर्षिजन सहज ही तैरते है।**

केशीकुमार— **बहुत सारे प्राणी घोर अन्धकार में है। इन प्राणियों के लिए लोक में उद्योत कौन करता है।**

गौतम— **उदित हुआ सूर्य लोक में सब प्राणियों के लिए उद्योत करता है।**

केशीकुमार— **वह सूर्य कौन सा है?**

गौतम— **जिनका संसार क्षीण हो गया है, ऐसे सर्वज्ञ जिन भास्कर का उदय हो चुका है। वे ही सारे विश्व में उद्योत करते हैं।**

केशीकुमार— **शारीरिक और मानसिक दुःखों से पीड़ित प्राणियों के लिए क्षेप और शिवरूप तथा बाधा-रहित आप कौन सा स्थान मानते हैं?**

गौतम— **लोक के अग्र भाग में एक ध्रुवस्थान है, जहाँ जरा, मृत्यु, व्याधि और वेदना नहीं है किन्तु वहाँ आरोहण करना नितान्त दुष्कर है।**

केशीकुमार— **वह कौन सा स्थान है?**

गौतम— **महर्षियों द्वारा प्राप्त वह स्थान निर्वाण, अव्याबाध, सिद्धि, लोकाग्र, क्षेम, शिव और अनाबाध, इन नामों से विश्रुत है।**

मुने! वह स्थान शाश्वत वास का है, लोक के अग्रभाग में स्थित है और दुरारोह है। इसे प्राप्त कर भव-परम्परा का अन्त करने वाले मुनिजन चिन्तन-मुक्त हो जाते है।

श्रमण केशीकुमार ने चर्चा का उपसंहार करते हुए कहा— **महामुने गौतम! आपकी प्रज्ञा साधु है। आपने मेरे संशयों का उच्छेद कर दिया है, अतः हे संशयातीत! सर्व सूत्र के पारगामिन् आपको नमस्कार है। गणधर गौतम को वन्दना के अनन्तर श्रमण केशीकुमार ने अपने वृहत् शिष्य-समुदाय सहित उनसे पंच महाव्रत रूप धर्म को भाव से ग्रहण किया और महावीर के भिक्षु संघ में प्रविष्ट हुए।**

केशीकुमार श्रमण की तरह अन्य पार्श्व अनुगामी कालासवेसियपुत्त अनगार, गंगेय अनगार पेढ़ालपुत्त उदक आदि भी तत्त्व चर्चा के पश्चात् महावीर के संघ में चतुर्यामात्मक दीक्षा से पंच महाव्रत रूप दीक्षा में आये।

पार्श्व अनुयायियों द्वारा गौतम स्वामी के संघ में सम्मिलित होने का दूरगामी प्रभाव यह हुआ कि परवर्ती काल में जब गौतम स्वामी गौतम बुद्ध के रूप में देश देशान्तर में प्रसिद्ध हुए तो उनके साथ उनके चरित्र में पार्श्वनाथ के चरित्र का एक महत्वपूर्ण वर्णन कमठ का उपसर्ग मुचिलिंद नाग के रूप में स्थापित कर दिया गया। पार्श्वनाथ चरित्र में आता है कि छदमद अवस्था में एक दिन वे वट वृक्ष की छाया में कूप के समीप ध्यानस्थ खड़े थे। पूर्वभव के विरोधी मेघमाली देव ने भयंकर कड़क और बिजली के साथ मुसलाधार वर्षा शुरु कर दी। प्रलय का सा दृश्य उत्पन्न हो गया। तीर्थंकर पार्श्वनाथ के गले तक पानी भर गया। तब धरणेन्द्र और पद्मावती देवी ने उनके मस्तक पर फण तानकर उन्हें सुरक्षित रखा। यहीं घटना गौतम बुद्ध के चरित्र में जोड़ दी गई। जब गौतम बुद्ध समाधि में लीन थे उस समय मेघ का प्रकोप होता है तब मूचिलिद नाग आकर उनके शरीर को सात बार

लपेट कर उनके मस्तक पर फण तानकर उनकी रक्षा करता है। गौतम बुद्ध के साथ इस घटना क्रम का जुड़ना उनका पार्श्व सम्प्रदाय से सम्बन्धों को पुष्ट करने के साथ-साथ विभ्रान्ति भी पैदा करता है क्योंकि तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ भगवान महावीर और गौतम बुद्ध से अढ़ाई सौ वर्ष पूर्व हो चुके थे।

समस्त बौद्ध वाङ्मय में अनेक जगहों पर भगवान महावीर का निर्ग्रन्थनाथ पुत्त के नाम से वर्णन मिलता है। जबकि आश्चर्य का विषय है कि समस्त जैन प्राचीन आगम साहित्य में गौतम बुद्ध का वर्णन नहीं है। ईसा की चौथी शताब्दी में रचित ऋषिभाषित ग्रन्थ जिसमें सभी परम्पराओं के ४५ अर्हतों का जिक्र है लेकिन गौतम बुद्ध के नाम का कोई उल्लेख नहीं है। इसमें सारिपुत्त का वर्णन है जिन्हें बौद्ध ग्रन्थों में बुद्ध का अनुगामी माना है। यह एक बहुत बड़ी जिज्ञासा उत्पन्न करता है कि गौतम बुद्ध जैसे महान व्यक्तित्व का वर्णन इसमें क्यों नहीं है, क्या कारण है, सूतकृतांग सूत्र में भी अन्य मतवादियों का वर्णन मिलता है। बुद्ध के मत का भी वर्णन है लेकिन गौतम बुद्ध का नाम नहीं है। सारिपुत्त को दोनों परम्पराओं में सम्मानित स्थान प्राप्त था। ऋषिभाषित में उन्हें अर्हत् का दर्जा दिया गया है। सारिपुत्त गौतम बुद्ध से ज्येष्ठ थे और उनका निर्वाण बुद्ध से पूर्व हुआ था। ऋषिभाषित में अर्हत् के रूप में उनके वर्णन से स्पष्ट होता है कि उनका निर्वाण महावीर के निर्वाण से भी पूर्व हुआ था क्यों कि ऋषिभाषित में भगवान महावीर तक का उल्लेख है उसके बाद का नहीं। गौतम स्वामी या गौतम बुद्ध का कोई भी उल्लेख ऋषिभाषित में हमें नहीं मिलता। कुछ विद्वानों ने सारिपुत्त को ही शाक्य मुनि माना है।

प्राचीन बौद्ध साहित्य में जहाँ कहीं भी गौतम बुद्ध के चरित्र का वर्णन है वहाँ सिद्धार्थ को गौतम नाम कब दिया गया क्यों दिया गया इसका भी कोई भी युक्तियुक्त उल्लेख नहीं मिलता है। अश्वघोष के बुद्ध चरित्र में लिखा है कि उनका गोत्र गौतम था इसलिये उनको गौतम

कहा गया है। गौतम स्वामी ही अपने गोत्र नाम से प्रसिद्ध थे। सिद्धार्थ का गोत्र गौतम नहीं था। राहुलजी ने भी इस विषय को अनदेखा किया है। कई विद्वानों का मानना है कि विमाता गौतमी के नाम से उन्हें गौतम कहा जाने लगा, जो ठीक नहीं है। गौतम गोत्र भगवान महावीर के प्रथम गणधर इन्द्रभूति का था जिसके अनुसार वह गौतम के नाम से प्रसिद्ध हुए। अश्वघोष के बुद्ध चरित्र में गौतम बुद्ध का गोत्र गौतम बताना एक महत्वपूर्ण प्रमाण है कि दोनों एक ही थे। गौतम बुद्धत्व प्राप्ति के बाद जब सिद्धार्थ सारनाथ में धर्म चक्र प्रवर्तन के लिये जाते हैं, तो पंच भिक्षु उनके समीप आते हैं उस समय उन्होंने उनको गौतम कहकर पुकारा।

> "बुद्ध बैठे हुए भिक्षुओं की ओर बढ़े, जिन्होंने इस तरह अपने विचार स्थिर किये थे; और जैसे जैसे वह उनके समीप आते गये वैसे वैसे वे अपना निश्चय तोड़ते गये।
>
> उनमें से एक ने उनका चीवर ग्रहण किया और उसी प्रकार दूसरे ने हाथ जोड़कर उनका भिक्षा-पात्र ग्रहण किया। तीसरे ने उन्हें उचित आसन दिया और उसी तरह दूसरे दोने पाँव धोने के लिए उन्हें जल दिया।
>
> इस प्रकार उनकी अनेक परिचर्याएँ करते हुए उन सबने उनसे गुरुवत् व्यवहार किया। किन्तु जब कि उन्होंने गोत्र नामसे उन्हें पुकारना नहीं छोड़ा, तब भगवान ने करुणापूर्वक उनसे कहा—
>
> (सर्ग १५, धर्म चक्र प्रवर्तन, बुद्ध चरित्र, अश्वघोष)

राहुलजी ने भी बुद्धचर्या में लगभग इसी प्रकार का वर्णन किया है—

> तब भगवान् क्रमशः यात्रा (= चारिका) करते हुए, जहाँ वाराणसी ऋषि-पतन मृग-दाव था, जहां पञ्चवर्गीय भिक्षु थे,

वहाँ पहुँचे। दूर से आते हुए भगवान् को, पञ्चवर्गीय भिक्षुओं ने देखा। देखते ही आपस में पक्का किया—

आवुसो! यह बाहुलिक (= बहुत जमा करने वाला) साधना-भ्रष्ट बाहुल्य-परायण (= जमा करने की ओर लौटा हुआ) श्रमण गौतम आ रहा है। इसे अभिवादन नहीं करना चाहिये, न प्रत्युत्थान (= सत्कारार्थ खड़ा होना) करना चाहिये। न इसका पात्र चीवर (= आगे बढ़कर) लेना चाहिये, केवल आसन रख देना चाहिये, यदि इच्छा होगी तो बैठेगा।

ऐसा कहने पर पञ्चवर्गीय भिक्षुओं ने भगवान् को कहा— आवुस! गौतम उस साधना में, उस धारणा में, उस दुष्कर तपस्या में भी तुम आर्यों के ज्ञानदर्शन की पराकाष्ठा की विशेषता, उत्तर-मनुष्य-धर्म (= जमाकरने की ओर पलट गये), तुम आर्य ज्ञान, ज्ञान दर्शन की पराकाष्ठा, उत्तर मनुष्य धर्म को क्या पाओगे।"

(प्रथमधर्मोपदेश पे. नं. २२, राहुल सांस्कृतायन, बुद्धचर्या)

अश्वघोष की मान्यता से स्पष्ट होता है कि गणधर गौतम स्वामी ही बुद्धत्व प्राप्ति के बाद लोगों में गौतम बुद्ध के नाम से जाने गयें। महावीर निर्वाण के बाद बुद्धत्व प्राप्ति के बाद उन्होंने भारत तथा भारत के बाहर जहाँ भी विचरण किया वहाँ वह गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए और उन्हीं गौतम बुद्ध की खोज में परवर्ती काल में चीन से फाह्यान, ह्वेनसांग आदि बौद्ध भिक्षु भारत में आये।

भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात गौतम स्वामी को केवलज्ञान हुआ था। उसके बाद के बारह वर्षों में वे कहाँ-कहाँ गये, कहाँ-कहाँ उनका चातुर्मास हुआ इसका वर्णन नहीं मिलता है। श्वेताम्बर परम्परा भगवान महावीर के पाटपर सुधर्मास्वामी को आसीन करती है, गौतम स्वामी को नहीं। दिगम्बर परम्परा गौतम स्वामी को महावीर के बाद

निर्ग्रन्थ संघ का प्रमुख मानती है। जो भी कुछ हो इसमें सन्देह नहीं है कि भगवान महावीर के बाद बारह वर्षों में गौतम स्वामी के विषय में जानकारी उपलब्ध नहीं होती है। कर्नल टॉड ने अपने ऐतिहासिक ग्रन्थ में लिखा है कि स्कैन्डेनेविया में जो गौतम गये थे वो महावीर के शिष्य गौतम थे। निश्चय ही उनको कहीं से ऐसा संदर्भ मिला होगा और यह असंभव भी नहीं है क्यों कि महावीर के शिष्यों में गौतम स्वामी ऋद्धि-सिद्धि दायक और लब्धिमान थे। उन्होंने तिब्बत में जाकर अष्टापद की यात्रा भी की थी।

बुद्धत्व प्राप्ति के बाद वाराणसी जाते समय रास्ते में उपक आजीवक से वार्तालाप करते हुए गौतम बुद्ध ने स्वीकार किया था कि वे '**जिन्**' है।

"तब भगवान उरुवेला में इच्छानुसार विहारकर, जिधर वाराणसी है, उधर चारिका (= रामत) के लिये निकल पड़े। उपक आजीवक ने देखा— भगवान् बोधि (= बुद्ध गया) और गया के बीच में जा रहे हैं। देखकर भगवान् से बोला— आयुष्मान् (आवुस)! तेरी इन्द्रियां प्रसन्न हैं, तेरा छवि-वर्ण (= कांति) परिशुद्ध तथा उज्वल है। किसको (गुरु) मानकर हे आवुस! तू प्रव्रजित हुआ है, तेरा शास्ता (= गुरु) कौन? तू किसके धर्म को मानता है? यह कहने पर भगवान ने उपक आजीवकको..... कहा— मैं सबको पराजित करने वाला, सबको जानने वाला हूँ। सभी धर्मों में निर्लेप हूँ। सर्व-त्यागी (हूँ), तृष्णा के क्षय से हो विमुक्त हूँ। मैं अपने ही जानकर उपदेश करूँगा।

आयुष्मन्! तू जैसा दावा करता है उससे तो अनन्त जिन हो सकता है।

मेरे ऐसे ही सत्त्व जिन होते हैं, जिनके कि आस्रव (= क्लेश = मल) नष्ट हो गये हैं।

मैंने पाप (= बुरे)— धर्मों को जीत लिया है, इसलिए हे उपक! मैं जिन हूँ। ऐसा कहने पर उपक आजीवक–होवोगे आवुस! कह, शिर हिला, वेरास्ते चल दिया।"

गणधर गौतम स्वामी और गौतम बुद्ध दोनों एक ही थे क्योंकि परम्परा से जो कथाएं जैन प्राचीन साहित्य में मिलती है वे थोड़े परिवर्तन के साथ बौद्ध जातक कथाओं में भी प्रचलित है।

The Indian religions किताब के contants में लिखा है कि ... The Jains originally pure Buddhists.

कुछ विद्वान यह मानते हैं कि बौद्ध धर्म की प्राचीन हीनयान शाखा और जैनधर्म लगभग एक ही है। पंडित नीलकंठ शास्त्री ने भी **उड़ीसा में जैन धर्म** नामक ग्रन्थ में इस बात का समर्थन किया है।

"इसमें जहाँ एक ओर कठोर साधना और कर्म में अतिनिष्ठा का निषेध होता है तो दूसरी ओर भोग की यथेच्छाचारिता और अति स्वतन्त्रता का निषेध भी है। मुनि का यही जैन धर्म या बौद्ध धर्म है। महामहिम सम्राट अशोक ने सिर्फ इसी बौद्ध धर्म के नाम से संस्कृत जैन धर्म को स्वीकार किया था। उन्होंने तत्कालीन समस्त सभ्य जगत् में एक दिन इसी धर्म का प्रचार कर अहिंसा का उद्घोष सुनाया था और उसका महत्त्व सामने रखा था। अतः बौद्ध धर्म का नाम प्रबल हो उठा। लेकिन ई० प्रथम शताब्दी के पहले से इस अध्यात्म-आत्मोपासक संस्कृत जैन धर्म या बौद्ध धर्म में भक्ति धर्म पूर्ण तथा प्रविष्ट हो गया था। उसी का नाम महायान है। इससे पहले जो बौद्ध धर्म था उसे हीनयान बौद्ध धर्म कहा गया है। महायान के पूर्व के जो जैन थे वे बहुतकर इसी हीनयान नाम से अभिहित हो रहे थे।"

अनेक विद्वानों ने अपने शोध निबन्धों में कहीं गौतम बुद्ध को वयस में भगवान महावीर से बड़ा माना है और कहीं उन्हें कनिष्ट कहा

गया है। बौद्ध ग्रन्थ सुतनिपात, संयुक्त निकाय के दहरसुत्त में, दिग्निकाय के सामंज्जस फल सुत्त, मज्झिम निकाय के सामगाम सुत्त के अनुसार महावीर बुद्ध से ज्येष्ठ थे और उनका निर्वाण बुद्ध से पूर्व हो गया था। दोनों समकालीन होते हुए भी भगवान महावीर की ज्येष्ठता और गौतम बुद्ध की कनिष्ठता के संदर्भ में यदि हम देखें तो यह एक जटिल प्रश्न बन जाता है। लेकिन अगर गणधर गौतम को इस संदर्भ से जोड़ते हैं तो इस जटिल प्रश्न का निराकरण भी हो जाता है। क्यों कि गणधर गौतम वयस में भगवान महावीर से बड़े थे लेकिन ज्ञान में, गुरु-शिष्य परंपरा में वे भगवान महावीर से छोटे थे। उनको बुद्धत्व (केवलज्ञान) की प्राप्ति भी भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात ही हुई थी। बुद्धत्व प्राप्ति के पूर्व तीस वर्ष तक भगवान महावीर के साथ रहे तथा भगवान महावीर के निर्वाण के बाद बारहवर्ष तक केवली पर्याय में रहने के बाद उनका निर्वाण हुआ।

जैन और बौद्ध साहित्य में भगवान महावीर और गौतम बुद्ध का एक दूसरे से साक्षात्कार का उल्लेख नहीं मिलता। एक ही समय, एक ही नगर के विभिन्न उद्यानों में वे रहे, ऐसे उल्लेख मिलते हैं। गृहपति उपालि तथा असि बंधक पुत्र ग्रामणी के प्रसंग पर दोनों नालंदा में थे। सिंह प्रसंग पर दोनों वैशाली में थे। अभय कुमार प्रसंग पर दोनों राजगृह में थे। फिर भी दोनों के परस्पर मिलने का कहीं पर भी उल्लेख नहीं मिलता है? तिब्बती बौद्ध साहित्य में पच्चीस बुद्धों का वर्णन मिलता है। Gangkare Teashi नामक किताब में ऋषभदेव, बाहुबली और भरत के वर्णन के साथ-साथ भगवान महावीर का वर्णन मिलता है तथा पच्चीसवां बुद्ध गौतम को बताया गया है। जैन परम्परा में चौबीस तीर्थंकरों का वर्णन है। वहीं पर तिब्बती बौद्ध परम्परा पच्चीसवां बुद्ध गौतम को मानती है। इसी किताब में गौतम और महावीर को समकालीन बताया है और उनके परस्पर वार्तालाप होते थे इसका भी उल्लेख है जो गौतम स्वामी ही गौतम बुद्ध है को प्रमाणित करता है।

Gangkare Teashi (White Kailas) नामक किताब में स्पष्ट लिखा है कि बौद्ध धर्म के पूर्व तिब्बत में जैन लोग रहते थे। जिनको Gyal Phal Pa And Chear Pu Pa बोला जाता था।

इस किताब के अनुसार—

* Before Budha in this region Jains were here.
* Digamber Chear Pu Pa were here and they consider sky as their cloth. They believe in Paap - Punya And Theory of Karma.
* Other Chear Pu Pa covered their body with that way Goe Tsen i.e. white clay.
* Other Jains came later on with white cloths.
* This Religion is well before Budhism on this earth.
* In begining Jain Lords were (Gods) 25.
* The first God name is KHYU Chok i.e. Lord Rishabh nath (Rushya nath)
* The last God name is PHEL WA i.e. Lord Mahavir.
* Lord Mahavir and Lord Budha are in same period.
* Both had interactions discussions about religion.

जैन परम्परा में आज भी जब कोई आचार्य किसी नगर में चातुर्मास करते हैं तो उसी नगर के अन्य स्थानों पर उनके प्रमुख शिष्य भी प्रवचन देते हैं। यह परम्परा प्राचीनकाल से चली आ रही है। जब भगवान महावीर राजगृह के गुणशील चैत्य में प्रवचन देते हैं तो उनके प्रमुख शिष्य गौतम और सुधर्मास्वामी भी शहर के अन्य स्थानों पर प्रवचन देते हैं। राजा श्रेणिक भगवान महावीर के पास जाते हैं और गौतम स्वामी

के पास भी। इसी प्रकार आजात् शत्रु भी भगवान महावीर के साथ-साथ गौतम स्वामी के पास भी जाते हैं तथा सुधर्मा स्वामी के पास जाने का भी उल्लेख मिलता है। भगवान महावीर के प्रति उनकी अनन्यभक्ति है। वहीं उनके शिष्य गौतम और सुधर्मा स्वामी के प्रति भी सम्मान और भक्ति है। यहीं कारण है तत्कालीन सभी राजाओं का वर्णन भगवान महावीर और भगवान बुद्ध के प्रबल अनुयायी के रूप में हमें मिलता है। यह होना असम्भव है कि एक ही राजा दोनों विरोधी धर्मों के अनुयायी हो। वर्तमान युग में भी अनेको आचार्यों के अनुगामी अनेक श्रावक है। यद्यपि ये श्रावक सभी आचार्यों को, साधुओं को वन्दन करते हैं परन्तु किसी विशेष आचार्य के ऊपर उनकी श्रृद्धा और भक्ति अधिक रहती हैं। दोनों परंपराओं में दीक्षित होने वाले राजा कौशम्बी के उदायन, अवन्ती के चण्डप्रद्योत, श्रेणिक बिम्बसार, आजातशत्रु आदि थे। यह बात आश्चर्यजनक है कि इन सभी को जैन और बौद्ध परम्पराएं अपना-अपना दृढ़ उपासक मानती है। आगमों, त्रिपिटकों और दोनों ही परम्पराओं के पुराण साहित्य में उक्त सभी पात्रों की भरपूर चर्चाएं मिलती है।

एक विचारधारा के अनुसार श्रेणिक पहले बौद्ध था, फिर जैन बना तो दूसरी विचारधारा है, पहले वह जैन था, फिर बौद्ध बना। बौद्ध परम्परा के अनुसार बुद्ध और श्रेणिक का सम्पर्क बुद्ध के बौद्धि लाभ से पूर्व ही हो जाता है। वे उनके आकर्षण व्यक्तित्व से प्रभावित होते हैं। श्रेणिक जब बुद्ध से भोग सामग्री के ग्रहण और उपभोग के लिए प्रार्थना करते हैं तो बुद्ध कहते हैं मैं राज्य पाने के लिये नहीं, बुद्धत्व पाने के लिए प्रवज्जित हुआ हूँ। तब श्रेणिक ने कहा आपकी कामना सफल हो, बुद्धत्व प्राप्तकर मेरे नगर राजगृह में अवश्य आना।

लगभग इसी प्रकार का विवरण उत्तराध्ययन सूत्र के २०वें अध्ययन में श्रेणिक राजा और अनाथीमुनि के प्रसंग में मिलता है। राजगृह के निकट मण्डी कुक्षी उद्यान था। वह नाना कुसुमों से आच्छादित व बहुत ही रमणीय था। एक दिन मगधराज श्रेणिक बन-

क्रीड़ा के लिए उस उद्यान में आया। वहाँ उसने एक महानिर्ग्रन्थ को देखा। वह एक घने वृक्ष की छाया में बैठा था। उसकी आकृति सुकोमल और भव्य थी। वय से वह तरुण था। मुख पर असीम शान्ति विराजमान थी। मगधराज श्रेणिक ने ज्यों ही उसे देखा, उसके मुख से निकल पड़ा— **कैसा वर्ण! कैसा रूप! इस आर्य की कैसी सौम्यता! कैसी इसकी क्षमा! कैसा इसका त्याग! कैसी इसकी भोग निस्पृहता!**

मगधराज श्रेणिक उस महानिर्ग्रन्थ के निकट गया और पूछने लगा— **भिक्षुक! तुम तरुण हो, इस भोग-काल में ही कैसे दीक्षित हो गये?**

मुनि— **महाराज! मैं अनाथ था।**

राजा— **भिक्षुक! तुम्हारे जैसा ऋद्धिमान् अनाथ? मैं तुम्हारा नाथ होता हूँ। पुनः संसार में प्रवेश करो और मनुष्य जीवन का आनन्द लूटो।**

मुनि— **मगधराज! तुम तो स्वयं अनाथ हो, मेरे नाथ कैसे हो जाओगे।**

राजा— **मैं अनाथ कैसे! तुम अनाथ किसे कहते हो भिक्षुक?**

मुनि— **कौशाम्बी नगरी थी। यथानाम तथागुण प्रभूत धन संचय नामक मेरा पिता था। माता, पत्नी, बन्धु सबका सुखद संयोग था। एक बार मेरी आँखों में भयंकर वेदना उत्पन्न हुई। शरीर में भी दाह-ज्वर उत्पन्न हुआ। वह वेदना निरुपम थी, असह्य थी कुशल चिकित्सक, अभ्यस्त मंत्रविद् सभी हताश रहे। वेदना शान्त नहीं हुई। राजन्! मेरा पिता मेरे लिए सब कुछ न्यौछावर करने की प्रस्तुत था; फिर भी वह मुझे वेदना-मुक्त नहीं कर सका; वह मेरी अनाथता थी। मेरी माता भीगी आँखों से मुझे निहारती रही, पर मुझे वेदना-मुक्त नहीं कर सकीं; यह मेरी अनाथता थी। मेरी पत्नी अनवरत मेरे पास खड़ी ही रहती थी और**

अपने आश्रुओं से मेरे वक्ष का परिसिंचन करती थी। वह भी मुझे वेदना-मुक्त नहीं कर सकी; यह मेरी अनाथता थी।

उस महानिर्ग्रन्थ ने मगधराज श्रेणिक को बताया—राजन्! मैंने स्वयं को सब तरह से अनाथ पाकर धर्म की शरण ग्रहण की। मैंने संकल्प किया—**मेरी वेदना शान्त हो, तो मैं अनगार धर्म को अंगीकार करूँ। अगले दिन वेदना शान्त हो गई और मैं अनगार बन गया।**

यह सब सुनकर मगधराज श्रेणिक बहुत तुष्ट हुआ। अंजलिबद्ध होकर कृतज्ञता के शब्दों में उसने कहा : **महामुने! आपने अनाथता का मुझे सम्यग् दिग्दर्शन कराया। आपका जन्म सफल है। आप ही सनाथ और सबन्धु है; क्योंकि आप सर्वोत्तम जिनमार्ग में अवस्थित है। मैंने आपको भोगार्थ आमंत्रित किया, आपके ध्यान में विघ्न किया, इसके लिये मैं क्षमा-प्रार्थी हूँ। मैं आपका अनुशासन ग्रहण करता हूँ।**

इन दोनों कथाओं से यह स्पष्ट होता है कि श्रेणिक राजा गौतम स्वामी को बौद्धि प्राप्ति के बाद राजगृह आने का आमंत्रण देते हैं तथा अनाथीमुनि के सम्पर्क में मुनि निर्ग्रन्थ धर्म को सपरिवार स्वीकार करते हैं। गौतम स्वामी और श्रेणिक की परस्पर चर्चा होती थी। पउमचरिय में विमलसूरि ने लिखा है कि यह चरित भगवान महावीर से गौतम स्वामी ने सुना और गौतम स्वामी से राजा श्रेणिक ने।

गौतम स्वामी और गौतम बुद्ध के संदर्भ में श्रेणिक बिम्बसार के पुत्र आजात शत्रु के चरित्र से भी हमें काफी कुछ वर्णन मिलता है। जैन परम्परा जहाँ उसे कुणिक कहती है वहीं बौद्ध परम्परा उसे आजात शत्रु कहती है। उसके जीवन की एक ऐतिहासिक घटना वैशाली गणतन्त्र पर मगध की विजय थी। जिसका विवरण दोनों परम्पराओं में मिलता है। भगवान महावीर का रक्त संबंध वैशाली गणतन्त्र के संघ में शामिल लिच्छवी जाति से था, वहीं गौतम बुद्ध को भी वैशाली बहुत प्रिय थी। आजात शत्रु वैशाली को जीतना चाहता था लेकिन उनको कैसे जीता

जाय उसका रास्ता उसे समझ नहीं आने पर वह खुद नहीं जाकर अपने मंत्री वस्सकार को गौतम बुद्ध के पास भेजता है। तब गौतम बुद्ध वस्सकार को वज्जियों के सात अपरिहानीय नियम बताते हैं और कहते हैं कि जब तक उन पर नियमानुसार वज्जि चलते रहेंगे उनको हानि नहीं हो सकती। तब वज्जियों में फूट डालने के लिये और उनको नियम में शिथिल करने के लिये आजात शत्रु ने अपने मंत्री वस्सकार को वहाँ भेजा जिसने कूटनीति से वज्झीसंघ में फूट डाली और आजात शत्रु द्वारा वैशाली को जीता गया। वैशाली विजय में छद्मभाव का प्रयोग दोनों ही परम्पराओं में हमें मिलता है। औपपातिक सूत्र में प्रवतिवादुक पुरुष की नियुक्ति, सिंहासन से अभियुत्थान, भगवान महावीर वंदन, से हमें आजात शत्रु की महावीर के प्रति पूर्ण आस्था व्यक्त होती है। ज्ञाता धर्म कथा सूत्र के अनुसार महावीर निर्वाण के पश्चात् सुधर्मा स्वामी की परिषद में भी वह जाता था। गौतम बुद्ध के निर्वाण के बाद उनकी अस्थियों पर उसने स्तूप बनवाया क्योंकि भगवान महावीर के बाद सबसे पहले गौतम स्वामी को ही केवलज्ञान प्राप्त हुआ-था और उनका निर्वाण भी उसके राज्यकाल में ही हुआ था। इन सभी घटना क्रमों से यह प्रमाणित होता है कि वह भगवान महावीर और सुधर्मा स्वामी के साथ-साथ गौतम बुद्ध के रूप में गौतम स्वामी का भी अनुगामी भी था।

राजा श्रेणिक, उनके पुत्र आजात शत्रु दोनों का भगवान महावीर और गौतम बुद्ध का अनुयायी होना इसी को प्रमाणित करता है कि गणधर गौतम ही केवल्य प्राप्ति के बाद गौतम बुद्ध कहलाए।

जैनेत्तर ग्रन्थों के अनुसार उस समय प्राची दिशा में बिहार और बंगाल आदि में ब्राह्मणों का जाना वर्जित माना गया था क्योंकि ये श्रमण निर्ग्रन्थ संस्कृति के प्रभाव क्षेत्र थे। अथर्ववेद में व्रात्यों का प्रिय धाम प्राची दिशा बताया गया है। गणधर गौतम स्वामी ने सर्वप्रथम ब्राह्मण दीक्षा ली थी। जैसे-जैसे वे प्राची दिशा की ओर बढ़े और भगवान महावीर के संपर्क में आकर श्रमण संस्कृति के रंग में ढल गये।

यह आश्चर्य का विषय है कि वेद, वेदान्त के प्राख्यात आचार्य जिन्होंने अध्ययन पूर्ण करने के बाद पाँच वर्ष तक विभिन्न प्रदेशों में घूमकर वहाँ के विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित किया हो। ऐसे ख्याति प्राप्त विद्वान जिनकी यशोगाथा सभी दिशाओं में फैली हुई थी उनका वर्णन हमें बौद्ध साहित्य में गौतम स्वामी के नाम से क्यों नहीं मिलता। यदि गौतम बुद्ध को भगवान महावीर से कनिष्ट मानते है तो उनके समय में गणधर गौतम स्वामी अवश्य ही विद्यमान रहे होगे लेकिन बौद्ध साहित्य में उनका कहीं भी जिक्र ना होना हमारे इस संदेह की पुष्टि करता है कि गणधर गौतम स्वामी ही केवलज्ञान के बाद गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए।

गौतम बुद्ध अपने निर्वाण के समय पावा से होकर कुसीनगर जाते हैं। बौद्ध ग्रन्थों में इसी पावा को भगवान महावीर का निर्वाण क्षेत्र माना है। वर्तमान में जैन समाज मगध में स्थित पावा को भगवान महावीर का निर्वाण स्थल मानता है। बौद्ध ग्रन्थों और वर्तमान शोधो से अनेक इतिहासकार अब यह मानने लगे है कि गोरखपुर के पास वाली पावा में ही भगवान महावीर का निर्वाण हुआ था। गौतम पावा से मध्याह्न में विहार कर सायं काल में ही कुसिनारा पहुँच जाते हैं। गौतम बुद्ध का अपने अन्तिम समय में पावा जाने का उद्देश्य भगवान महावीर के निर्वाण कल्याणक की वंदना का ही हो सकता है। कल्पसूत्र में वर्णन है कि जिस रात को भगवान महावीर का परिनिर्वाण हुआ उस रात को नौ मल, नौ लिच्छवी, अट्ठारह काशी कौशल के गणराजा पौषध व्रत में थे। इसी प्रकार गौतम स्वामी के निर्वाण के बाद उनकी अन्त्येष्टि भी मल्ल क्षत्रियों ने सम्पन्न की। क्योंकि उनका निर्वाण बुद्धत्व प्राप्ति के बाद हुआ इसलिए उन्हें गौतम बुद्ध कहा जाने लगा और परवर्ती काल में इसी नाम से वह प्रसिद्ध हो गये।

श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों परम्पराओं में भेद की सृष्टि ई. सन् दूसरी शताब्दी में हुई। यद्यपि महावीर के समय में ही अचेलक

आर सचेलक दोनों ही प्रकार के मुनि थे। प्रचलित परम्परा के अनुसार चन्द्रगुप्त मौर्य के समय अकाल के कारण मुनियों का एक दल दक्षिण में गया। बारह वर्ष बाद अकाल समाप्ति पर जब वह वापिस आया तो उन्होंने देखा कि यहाँ जो मुनि संघ था वह शिथिल हो गया और यहीं से मतभेद की सृष्टि कुछ विद्वानों ने मानी है लेकिन परवर्ती आचार्यों में ये मतभेद प्रकट नहीं होता। तब यह प्रश्न उठता है कि आचार्य स्थूलिभद्र को आगम की वाचना क्यों करनी पड़ी और इसका प्रमुख कारण क्या था? बारह वर्षों बाद जब दक्षिण से जैन संघ के लोग वापिस आये तो उन्होंने देखा कि अकाल के प्रभाव से शिथिल हुए पार्श्वपरम्परा के साधु जो गौतम स्वामी के संघ में शामिल हुए थे। उनकी शिष्य परम्परा सुधर्मा स्वामी की परम्परा से अलग हो गयी। अकाल समाप्ति के बाद उन्होंने संघ में वापिस आने की बजाय नया संघ बनाया जो गौतम स्वामी की स्मृति में बौद्ध संघ कहलाया। सुधर्मा स्वामी की परम्परा के साधुओं को अनुशासन में दृढ़ रखने के लिये आचार्य स्थूलिभद्र ने आगम सूत्र की वाचना करायी। दिगम्बर सम्प्रदाय भद्रबाहु तक की परम्परा को मानते हैं उसके बाद दक्षिण जाने के कारण वहाँ से सम्बन्धित आचार्यों की परम्परा को ही उन्होंने मान्यता दी। यहीं आचार्यों के क्रम में परिवर्तन का कारण बना। उस समय बड़ा परिवर्तन यहीं हुआ था कि पार्श्व परम्परा के साधुओं के एक संघ ने जो महावीर परम्परा में गौतम स्वामी के संघ में शामिल हुआ था। कुछ शिथिल होकर अलग हो गया। ये जो शिथिल हो गये थे इन्होंने विहारों और मठों में रहना शुरु कर दिया और गौतम स्वामी के नाम पर गौतम बुद्ध का संघ कहलाने लगा। अशोक के शिलालेख में हमें संघ का वर्णन मिलता है। पर किसका, इसका उल्लेख नहीं है। शायद पार्श्वनाथ के चरित्र और महावीर के चरित्र की कुछ-कुछ बातों को गौतम स्वामी के साथ जोड़कर गौतम बुद्ध का जीवन चरित्र रचित किया गया। मूल परम्परा से अलग निकली नई परंम्परा मूल परम्परा को नष्ट या फिर बदलकर स्वयं स्वयं को स्थापित

करती है। अतः यहाँ भी यह अपवाद नहीं है। यह भी कह सकते है कि जो सम्प्रदाय जिस सम्प्रदाय के जितना अधिक निकट होता है वहीं उसका सबसे अधिक आलोचक भी होता है। आज भी यहीं स्थिति है। जैन सम्प्रदाय जितने परस्पर आपस में एक दूसरे के आलोचक है उतने अन्य धर्मों के नहीं।

मैंगस्थनीज ने अपने वर्णन में ब्राह्मणों और श्रमणों का वर्णन किया है। बौद्धों का अलग से कोई वर्णन नहीं मिलता है। यदि बौद्ध संघ उस समय प्रभावशाली होता तो उसका वर्णन हमें अवश्य ही उसके उल्लेखों में मिलता।

बौद्ध संघ के प्रभाव का विस्तार अशोक के समय से ही देखने को मिलता है। अशोक के शिलालेखों में लिखा है कि यदि संघ के नियम नहीं माने तो श्वेतवस्त्र पहना दिये जाएगें, यह भी लिखा है कि आजीविकों को, निर्ग्रन्थों को, ब्राह्मणों को और संघ को दान दिया जायेगा। लेकिन महत्वपूण बात यह है कि यह संघ किसका था इसका स्पष्ट वर्णन नहीं किया गया। गेरुवें वस्त्र वाले को श्वेतवस्त्र दण्ड स्वरूप नहीं पहनाया जा सकता। लेकिन दिगम्बरों को या आजीवकों को दण्ड स्वरूप शिथिल होने पर श्वेतवस्त्र पहनाया जा सकता है।

सम्राट अशोक के शिलालेख भारतीय इतिहास के आधार स्तम्भ माने गये है। उसके लघु शिलालेख न० १ में जो कि रूपनाथ, सहसाराम और बैराट में प्राप्त हुआ है। उसमें लिखा है— देवताओं के प्रिय इस प्रकार कहते हैं: ढाई वर्ष से अधिक हुए कि मैं उपासक हुआ, पर मैंने अधिक उद्योक नहीं किया; किन्तु एक वर्ष से अधिक हुए, जब से मैं संघ में आया हूँ, तब से मैंने अच्छी तरह से उद्योग किया है। इस बीच में जो देवता सच्चे माने जाते थे, वे अब झूठे सिद्ध कर दिये गये हैं। यह उद्योग का फल है। यह (उद्योग का फल) केवल बड़े ही लोग पा सकें, ऐसी बात नहीं है, क्योंकि छोटे लोग भी उद्योग करें, तो महान्

स्वर्ग का सुख पा सकते हैं। इसलिए यह अनुशासन लिखा गया है कि "**छोटे और बड़े उद्योग करें।**" मेरे पड़ोसी राजा भी इस अनुशासन को मानें और मेरा उद्योग चिर स्थित रहे। इस बात का विस्तार होगा और अच्छा विस्तार होगा। कम-से-कम डेढ़ गुना विस्तार होगा। यह अनुशासन यहाँ और दूर के प्रान्तों में पर्वतों की शिलाओं पर लिखा जाना चाहिए, जहाँ कहीं शिलास्तम्भ हों, वहाँ यह अनुशासन शिलास्तम्भ पर भी लिखा जाना चाहिए, इस अनुशासन के अनुसार जहाँ तक आप लोगों का अधिकार हो, वहाँ-वहाँ आप लोग सर्वत्र इसका प्रचार करें। यह अनुशासन (मैंने) उस समय लिखा, जब बुद्ध भगवान् के निर्वाण को २५६ वर्ष हुए थे।

लघु शिलालेख न० २ में, जो की ब्रह्मगिरि, सिद्धपुर व जतिंग रामेश्वर में प्राप्त हुआ है, यहीं बात स्वल्प भिन्नता के साथ मिलती है। उसमें सम्राट अशोक लिखते।

सुवणगिरि ते अय पुतस महामाताणं च वचनेन इसिलसि महामाता आरोगियं वतविया हेवं च वतविया। देवाणं पिये आणपयति।

अधिकानि अढातियानि वय सुमि...........दियढिय वढिसति। इयं च सावणे सावपते व्यूधेन २५६।

सुवर्णगिरि से आर्यपुत्र (कुमार) और महामात्यों की ओर से इसिला के महामात्यों को आरोग्य कहना और यह सूचित करना कि देवताओं के प्रिय आज्ञा देते है कि अढ़ाई वर्ष से अधिक हुए............डेढ़ गुना विस्तार होगा। यह अनुशासन (मैंने) बुद्ध के निर्वाण से २५६वें वर्ष में प्रचारित किया (या सुनाया था)।

अशोक के शिलालेख में स्पष्ट लिखा है कि उसने यह शिलालेख बुद्ध के निर्वाण के २५६ वर्ष बाद लिखाया था। यह शिलालेख अशोक के सिंहासन पर बैठने के २१ वर्ष बाद लिखा गया। यह हम पहले ही दर्शा चुके है कि जिन महापुरुषों को ज्ञान प्राप्त होता था उन्हें बुद्ध कहा

जाता था। उस समय के मान्यता प्राप्त बुद्धों में गोशालक, सारिपुत्त, वर्द्धमान महावीर, गौतम स्वामी या गौतम बुद्ध, सुधर्मास्वामी एवं जम्बूस्वामी आदि थे। अब प्रश्न यह उठता है कि अशोक ने किस बुद्ध के निर्वाण के २५६ वर्ष बाद यह शिलालेख लिखाया। गोशालक महावीर से १६ वर्ष पहले निर्वाण प्राप्त किये थे। यदि भगवान महावीर का निर्वाण समय ५२७ ई० पू० मानते है तो गोशालक का समय ५४३-५४४ ई० पू० आता है। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार सारिपुत्त का निर्वाण गौतम बुद्ध से पूर्व हुआ था। ऋषिभाषित में उनका अर्हत् के रूप में वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने भी महावीर से पूर्व निर्वाण प्राप्त किया था। बौद्ध साहित्य में यह वर्णन है कि आजात शत्रु के शासन काल के आठवें वर्ष में बुद्ध का निर्वाण हुआ। इस विवरण से यह स्पष्ट होता है कि यहाँ बुद्ध का निर्वाण सारिपुत्त के लिए ही कहा गया है। गौतम स्वामी का निर्वाण भगवान महावीर के निर्वाण से बारह वर्ष बाद होता है अर्थात ५१५ ई० पू० में। सुधर्मास्वामी का निर्वाण महावीर स्वामी से बीस वर्ष बाद ५०७ ई० पू० में होता है। अशोक के काल के साथ बुद्ध निर्वाण की २५६ वर्षों की प्रचलित निर्वाण तिथि अशोक के शिलालेख में लिखे बुद्ध के साथ संगति मिलाने से सुधर्मा स्वामी के निर्वाण के समय के साथ सटीक बैठती है। सुधर्मा स्वामी का निर्वाण ५०७ ई० पू० हुआ था। ५०७ – २५६ = २५१ ई० पू० यह शिलालेख लिखा गया। जिसके अनुसार २५१ + २१ = २७२ ई० पू० में अशोक सिंहासन पर बैठा था। अशोक के सिंहासन अधिकृत करने का यहीं समय इतिहासकारों द्वारा भी मान्य है।

सुधर्मास्वामी भगवान महावीर के पंचम गणधर थे और भगवान महावीर के पटधर भी सुधर्मास्वामी ही हुए। उनका जन्म विदेह के कोल्लाग सन्निवेश में हुआ था जो वैशाली के आस-पास ही है। यद्यपि जैन साहित्य की दोनों परम्पराओं में भगवान महावीर के ग्यारह गणधरों को ब्राह्मण जाति का बताया है लेकिन वि० सं० १०७६ में वीर नामक कवि ने और कवि राजमल ने वि० सं० १६३२ में सुधर्मा स्वामी

को क्षत्रिय पुत्र बताया है। यह किस आधार पर बताया है इस पर विशेष अनुसंधान की आवश्यकता है।

१. देवानंपियेन पियदसिन लाजिन बीसतिवसाभिसितेन
२. अतन आगाच महोयते हिद बुधे जाते सक्यमुनी ति (१)
३. सिला बिगडभीचा कालापित सिलाथभे च उसपापिते
४. हिद भगवं जाते ति (२) लुंमिनिगामे उबलिके कटे
५. अठभागिये च (३)

१. बीस वर्षों से अभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा

२. स्वयं आकर (स्थानका) गौरव किया गया, क्योंकि यहाँ शाक्यमुनि बुद्ध जन्म लिये थे।

३. पत्थरकी दृढ़ दीवारे यहाँ बनायी गयी और शिला-स्तम्भ खड़ा किया गया।

४. क्योंकि भगवान् यहाँ उत्पन्न हुए। लुम्बिनी ग्राम (धर्म–) करसे मुक्त किया गया।

५. और अष्टभागी बना दिया गया।

—रुक्मिनदेई स्तम्भ अभिलेख

अशोक के शिलालेख में शाक्यमुनि का वर्णन तो मिलता है, लेकिन गौतम बुद्ध के नाम का कोई वर्णन कहीं पर भी नहीं है जो हमें सोचने पर मजबूर करता है कि यदि शाक्यमुनि गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध थे तो यह नाम अशोक के शिलालेख में क्यों नहीं आया।

१. देवानंपियेन पियदसिन लाजिन चोदसवसाभिसितेन
२. बुधस कोनाकमनस थुवे दुतियं वडिते (१)
३. .... साभिसितेन च अतन आगाच महीयिते
४. .... पापिते (२)

१. चौदह वर्षों से अभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा द्वारा
२. कनकमुनि बुद्ध का स्तूप दुगुना बढ़ाया गया।

३. बीस वर्षों से अभिषिक्त (राजा) द्वारा स्वयं आकर (उसका) गौरव किया गया।

४. (और शिला-स्तम्भ) खड़ा किया गया।

—निगली सागर स्तम्भ अभिलेख

अशोक के शिलालेख में कनकमुनि बुद्धा के स्तूप का वर्णन मिलता है। ये कनकमुनि बुद्धा कौन थे इसके विषय में अध्यन करने से यह पता चला कि ये पार्श्वनाथ सम्प्रदाय के मुनि थे। इससे यह स्पष्ट होता है कि गौतमबुद्ध के संघ की परम्परा पार्श्वपरम्परा से ही संयुक्त थी। बहुत से विद्वानों के मत में महावीर परम्परा में जो मुनिधर्म और श्रावकधर्म का अन्तर है वहीं जैनधर्म और बौद्धधर्म में है। मुनि धर्म की कठिन चर्या के बजाय श्रावकधर्म की चर्या को बौद्ध संघ ने अपनाया। अशोक के शिलालेखों से भी यह स्पष्ट होता है कि उसने श्रावक धर्म को अपनाया था, मुनिधर्म को नहीं।

श्रमण संस्कृति का वास्तविक स्वरूप जैन धर्म के रूप में आज तक भारतवर्ष में विद्यमान है। जबकि भारत के बाहर यह बौद्धधर्म के रूप में प्रसिद्ध हुआ। श्रमण परम्परा का मूल भारत में इतना गहरा और प्रभावशाली था कि शंकराचार्य और शशांक जैसे प्रबल शैव उपासकों द्वारा श्रमण सम्प्रदाय को प्रताड़ित करने के बावजूद इसका आस्तित्व बरकरार रहा। कालान्तर में विभिन्न आचार्यों के अलग-अलग संघ बन गये जो दूंर से देखने में अलग-अलग दृष्टिगोचर होते थे लेकिन उनका हार्द तीर्थंकर परम्परा ही थी क्योंकि मूल की जड़े गहरी होती है उन्हें उखाड़ा नहीं जा सकता। लेकिन उसमें फेर-बदल किया जा सकता है। गणधर गौतम स्वामी और गौतम बुद्ध के व्यक्तित्व को भिन्न रूप में दर्शाकर अलग-अलग सम्प्रदायों में विभेद की सृष्टि की गई। जबकि भगवान महावीर के प्रथम गणधर गौतम स्वामी और गौतम बुद्ध एक ही थे।

"According to the Jains, the chief disciple of their Tirthankaṛa Mahavira, was called Gautama Swami or Gautama Indrabhuti (Ward's Hindus, p. 247 and Calebrooke's Essays, vol. II. p. 179) whose identity with Gautam Buddha was suggested by both Dr. Hamilton and Major Delamaine and was accepted by Calebrooke. This is what Calebrooke says in his Essays, vol. II. p. 276 : "In the Kalpa Sutra and in other books of the jains, the first of Mahavira's disciples in mentioned under the name of Indrabhuti, but in the inscriptions under that of Gautam Swami. The names of the other ten precisely agree. Whence it is to be concluded that Gautama, the first one of the first list, is the same with the Indrabhuti, first of the second list. It is certainly probable, as remarked by Dr. Hamilton and Major Delamaine that the Gautama of the Jains and Gautama of Buddhas is the same personage". Two of eleven disciples of Mahaviṛa survived him viz. Sudharma and Gautama. Sudharma's spiritual successors are the Jain priests, whereas the Gautam's followers are the Buddhist"--- Manmathnath Shastri, M. A., M. R. A. S., Buddha : *His life his teachings, his order, 1910* (Second edition) pp, 21-22.

मोह रहित मनुष्य दुःख मुक्त है।

B.C. JAIN JEWELLERS PVT. LTD.

22, Camac Street
3rd floor, Block-A
Kolkata - 700 017
Phone : 2283-6203/6204/0056
Fax : 2283-6643
Resi : 2358-6901,2359-5054

TITTHAYARA
Vol-XXXV No.01
25th April 2011

Registered
No. KOL.RMS / 070/2010-12
R.N.I. 30181/77

सभी प्राणियों के लिये मनुष्य जन्म मिलना दुर्लभ होता है,
क्योंकि बुरे कर्मों का फल निश्चय ही मिलता है
अतः मनुष्य को क्षण भर भी प्रमाद न कर
शुभ कार्यों में तत्पर रहना चाहिये।

Kamal Singh Rampuria

Rampuria Mansions
17/3, Mukhram Kanoria Road, Howrah
Phone No. : 2666-7212/7225